गढ़वाल में समाज सुधार आंदोलन में स्थानीय समाचारपत्रों की भूमिका

डॉ. सुधांशु जायसवाल

सारांश :- **प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व सभाओं और सामाजिक संघों की स्थापना ब्रिटिश गढ़वाल में हो चुकी थी। इन संस्थानों के उदय से जनता में सामाजिक चेतना का अंकुरण होने लगा था। इन संघों एवं संस्थाओं की उत्पत्ति शिक्षा के प्रसार के फलस्वरूप हुई थी। इस समय बहुत से पर्वतीय युवक आधुनिक शिक्षा के लिए मैदानी भागों में विशेषकर बनारस, आगरा, इलाहाबाद, बरेली आदि शैक्षणिक केन्द्रों में पहुंचे। ये विद्यार्थी गढ़वाल के सम्भ्रान्त परिवारों व उच्च जातियों से सम्बन्ध रखते थे। पर्वतीय क्षेत्रों से बाहर निकलने पर उन्हें अपने आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक पिछड़ेपन का आभास हुआ। शिक्षा पूरी करने पर जब ये विद्यार्थी वापस लौटे तो उन्होंने पहाड़ की सामाजिक-आर्थिक और राजनैतिक अचेतना को देखते हुये उसे जगाने का प्रयास किया और इसके लिए उन्होंने सबसे सशक्त माध्यम पत्रकारिता को चुना। गढ़वाल क्षेत्र में समाज सुधार आन्दोलनों का दौर काफी लम्बा चला, वह स्वतन्त्रता से पूर्व का दौर हो या स्वतन्त्रता के बाद के दौर से लेकर अब तक का। समाज सुधार आन्दोलनों में पत्रकारिता की भूमिका के भी कई उदाहरण स्पष्ट हैं। जिनसे ज्ञात होता है कि पत्रकारिता की भूमिका गढ़वाल क्षेत्र के समाज सुधार आन्दोलनों में महत्वपूर्ण रही है।**

महत्वपूर्ण शब्द :- आंचलिक पत्रकारिता, बेगार, सुधार आंदोलन, विलीनीकरण

प्रस्तावना

स्वतन्त्रता से पूर्व भारत की बौद्धिक चेतना का विकास दो पृथक चरणों में हुआ। प्रथम चरण में भारतीय बौद्धिक जीवन पर धार्मिक और सुधारवादी आन्दोलनों का प्रभाव प्रबल रहा। दूसरे चरण में राजनैतिक आन्दोलनों ने बौद्धिक जीवन में प्राथमिकता प्राप्त की।[1]

प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व सभाओं और सामाजिक संघों की स्थापना ब्रिटिश गढ़वाल में हो चुकी थी। इन संस्थानों के उदय से जनता में सामाजिक चेतना का अंकुरण होने लगा था। इन संघों एवं संस्थाओं की उत्पत्ति शिक्षा के प्रसार के फलस्वरूप हुई थी। इस समय बहुत से पर्वतीय युवक आधुनिक शिक्षा के लिए मैदानी भागों में विशेषकर बनारस, आगरा, इलाहाबाद, बरेली आदि शैक्षणिक केन्द्रों में पहुंचे। ये विद्यार्थी गढ़वाल के सम्भ्रान्त परिवारों व उच्च जातियों से सम्बन्ध रखते थे। पर्वतीय क्षेत्रों से बाहर निकलने पर उन्हें अपने आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक पिछड़ेपन का आभास हुआ।[2] शिक्षा पूरी करने पर जब ये विद्यार्थी वापस लौटे तो उन्होंने पहाड़ की सामाजिक-आर्थिक और राजनैतिक अचेतना को देखते हुये उसे जगाने का प्रयास किया और इसके लिए उन्होंने सबसे सशक्त माध्यम पत्रकारिता को चुना।

यदि कलकत्ता भारतीय पत्रकारिता का जन्म स्थान था तो मुम्बई वह जगह थी जहाँ से भारतीय पत्रकारिता ने कृष्णदास मुलजी, गोपाल राव हरि देशमुख, बहराम मालाबाडी, महादेव गोविंद रानाडे और दादाभाई नौरोजी जैसी विभूतियां दी। विद्रोह के एक वर्ष पहले और इसके कई वर्ष पश्चात् भी समाज सुधार मुंबई के भाषा प्रेस का मुख्य विषय बना रहा।

यह तो बात थी राष्ट्रीय स्तर की, यदि गढ़वाल क्षेत्र की पत्रकारिता पर एक नजर डाले तो यहाँ की स्थानीय पत्रकारिता का उद्भव ही समाजसुधार को लेकर हुआ है। इसके उदाहरण 'गढ़वाल सभा' द्वारा प्रकाशित 'गढ़वाली' पत्र जिसके सम्पादक विशम्बर दत्त चन्दोला, तथा 'पुरूषार्थ' जिसके सम्पादक गिरिजा दत्त नैथानी थे। इसी प्रकार अन्य कई स्थानीय समाचार पत्र-पत्रिकाएं थीं या हैं जिनका उद्देश्य सामाजिक विकास व समाज सुधार था। स्वतंत्रता के पश्चात यहाँ कुंवर प्रसून, उमेश डोभाल, चन्द्र कुंवर बर्त्वाल आदि ऐसे पत्रकार भी हुये हैं जिन्होंने हमेशा सामाज में व्याप्त आडम्बर, कुरीतियों व महिलाओं और बच्चों पर हो रहे अत्याचारों से सम्बन्धित आंदोलनों को लेकर विभिन्न समाचार पत्र -पत्रिकाओं में समाचार प्रकाशित किये।

हमारे देश में यदि समाज सुधार से सम्बन्धित आंदोलनों

का इतिहास देखा जाय तो इसका एक बहुत बडा इतिहास रहा है। जिसका प्रभाव किसी न किसी रूप से गढ़वाल क्षेत्र पर भी पड़ा है। राष्ट्रीय स्तर पर कई ऐसे महापुरूष हुये हैं जिन्होंने समाज सुधार को लेकर आंदोलन तो किये ही हैं साथ ही इन आंदोलनों को जनमानस तक पहुंचाने के लिए पत्रकारिता भी शुरू की और वे अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफल भी हुये। दादाभाई नैरोजी एक महान राष्ट्रवादी नेता थे जो सामाजिक सुधार को बढ़ावा देने के उद्देश्य से खुरशेदजी कामा के माध्यम से 1851 में आरम्भ किये गए समाचार-पत्र के सम्पादक बने।[3]

इसी उद्देश्य से 1857 में एक महिला पत्रिका 'स्त्रीबोध' का प्रकाशन आरम्भ किया गया। इन समाज सुधार पत्र-पत्रिकाओं के एक प्रमुख समर्थक करसन दास मुलजी थे जिन्होंने 1852 में स्वयं 'सत्य प्रकाश' नामक पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया। बालशास्त्री जमेकर और उसके सहयोगियों का 1832 से 1853 तक भारतीय भाषा के समाचार पत्रों पर वर्चस्व बना रहा और उसके पश्चात 1853 से 1870 तक करसन दास मुलजी ने इस समाचार पत्र पर अपनी मजबूत पकड़ बनाई। तत्पश्चात् प्रार्थना समाज (ब्रह्म समाज का बंबई रूप) के हिंदू समाज सुधारकों ने भारतीय भाषाओं में छपने वाले पत्र-पत्रिकाओं पर अपना वर्चस्व स्थापित किया।[4]

वर्ष 1884 और 1891 के मध्य महान समाज सुधारक बहराम मालाबाडी ने हिंदू समाज की कमियों और उसकी बुराइयों को समाप्त करने हेतु प्रेस के माध्यम से अभियान आरम्भ किया। मालाबाडी और करसन दास ने सामाजिक बुराइयों के विरूद्ध अनवरत संघर्ष आरम्भ किया, हालांकि इनमें से हरेक ने इसके लिए अपने-अपने तरीके अपनाए। करसन दास एक व्यावहारिक समाज सुधारक थे जो हिंदू समाज के दबे-कुचले और उत्पीड़ित लोगों की दुर्दशा से ज्यादा विचलित थे। मालाबाडी ने बाल विवाह की प्रथा को समाप्त करने हेतु एक देशव्यापी आंदोलन आरम्भ किया जिसके लिए उन्होंने अंग्रेजी भाषा का उपयोग किया क्योंकि वे यह समझते थे कि मात्र इसी भाषा के उपयोग के माध्यम से पूरे देश भर में अपनी बात पहुँचा सकते हैं। करसन दास विधवा पुनर्विवाह और बालिका शिक्षा के अभियान को छोड़कर अपने ही समुदाय (वैष्णव बल्लभ) के संतों पर आक्षेप लगाने में लग गये। मालाबाडी और करसन दास दोनों अंग्रेजी और अंग्रेजियत परस्त दलों के पक्के समर्थक थे जबकि करसनदास में इंग्लैण्ड और अंग्रेजों के प्रति अनुराग इतना ज्यादा था कि स्वयं निजी परेशानी में पड़ गए।[5] मालाबाडी के अंग्रेजी जोश के कारण उनके और रानाडे समूह के लोगों के मध्य अनावश्यक विवाद पैदा हो गया। जिसे शांत होने में काफी समय लगा।

दादाभाई नौरोजी ने अपनी मासिक पत्रिका 'दि वॉयस ऑफ इंडिया' का प्रकाशन 1 फरवरी, 1882 को प्रारम्भ किया। इस पत्रिका का उद्देश्य भारत हेतु निष्पक्ष सुनवाई और न्याय सुनिश्चित करना था। इसने सर्वाधिक महत्वपूर्ण समाचार और विचार प्रकाशित किए जो अन्य भारतीय पत्रिकाओं में भी छपे। इसका तात्पर्य भारतीय प्रेस के मत को प्रतिबिंबित करना था।[6]

दादाभाई के भारत से अनुपस्थित रहने के दौरान इस पत्रिका को मालाबाडी को सौंपा गया था एवं 1890 में इस पत्रिका का मालाबाडी साप्ताहिक 'स्पेक्टर' के साथ विलय हो गया। इनके अलावा देश में राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानन्द, पण्डित मदन मोहन मालवीय, महात्मा गांधी आदि समाज सुधारक व राष्ट्रभक्त हुये जिन्होंने समय-समय पर समाज हित में सामाजिक दशा को सुधारने में पत्रकारिता का उपयोग किया है।[7]

गढ़वाल क्षेत्र में समाज सुधार आंदोलनों का एक लम्बा इतिहास रहा है वह कुलीबर्दायस हो या डोलापालकी या फिर जंगलात को लेकर हो या बेगार को लेकर इन सभी सामाजिक आंदोलनों में स्थानीय पत्रकारिता की भूमिका यदि देखी जाय तो काफी सराहनीय व विचारणीय रही है। स्वतन्त्रता पूर्व गढ़वाल में कुछ ऐसे महान व्यक्तित्व हुये हैं जिन्होंने समाज को दशा दिशा देने में पत्रकारिता का सहारा लिया और स्थानीय स्तर पर कई पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन व प्रकाशन किया। गढ़वाल क्षेत्र में समाज सुधार आन्दोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि काफी जटिल है। यहाँ कई ऐसे समाज सुधारक आन्दोलन हुये है जिन्हें मुकाम तक पहुँचाने में यहाँ की स्थानीय पत्रकारिता ने मुख्य भूमिका निभाई है।

गढ़वाल क्षेत्र के समाज सुधार आन्दोलनों में स्थानीय पत्रकारिता की भूमिका को विस्तृत रूप से जानने के लिए गढ़वाल के पत्रकारिता काल को यहाँ दो भागों में बाँटा जा रहा है जो निम्नवत हैं-

1. स्वतन्त्रता से पूर्व
2. स्वतन्त्रता के पश्चात

स्वतन्त्रता से पूर्व

गढ़वाल में स्वतन्त्रता से पूर्व समाज सुधार आन्दोलनों में स्थानीय समाचार पत्रों की भूमिका का अध्ययन करने के लिए स्वतन्त्रता पूर्व प्रकाशित होने वाले पत्र-पत्रिकाओं में समाज सुधार से सम्बन्धित लेखों व समाचारों का अध्ययन करना आवश्यक होगा।

स्वतन्त्रता पूर्व संयुक्त प्रान्त उत्तरप्रदेश के कुछ नगरों में

समाचार पत्र छापे जा रहे थे पर्वतीय क्षेत्र में भी पत्रों का प्रकाशन आरम्भ हो गया था। स्वतन्त्रता आन्दोलन जैसे-जैसे तेज होता गया वैसे-वैसे वर्षों के उत्पीड़नों से दबी हुई भावनायें आक्रोशित होकर इन पत्रों के द्वारा अभिव्यक्त होने लगीं।

गढ़वाल के स्वतन्त्रता पूर्व समाचार पत्र :

गढ़वाल समाचार-1902, गढ़वाली मई-1905-1952, पुरूषार्थ-1918-1919, तरूण कुमाऊं - 1922-1924, क्षत्रिय वीर - 1923-1934, गढ़देश- 1929-1934, गढ़वाल हितैषी- 1930-1937, उत्तर भारत- 1936-1939-40, स्वराज्य संदेश-1935-1940, नवप्रभात-1936-1942, सत्यवीर-1927-1930, कर्मभूमि-1939-1988।[8]

पर्वतीय क्षेत्रों में आवागमन की असुविधायें, समाचार भेजने मँगवाने के लिये साधनों का अभाव, समाचार पत्रों के विक्रय-वितरण आदि की व्यवस्था, अंग्रेज अधिकारियों की सतर्क दृष्टि तथा आर्थिक अभावों से जूझते इन सम्पादकों ने अपने पत्रों की श्रम-साध्य यात्रा जारी रखी। कभी पत्र बन्द किये गये तो फिर से चालू करने का प्रयत्न भी किया गया।

स्वतन्त्रता से पूर्व जिस तरह पूरे देश में स्वतन्त्रता संग्राम की आग लगी थी उसमें पत्रकारिता का एकमात्र उद्देश्य अंग्रेजों के खिलाफ भारतीय जनता को जागरूक करना था उसी प्रकार गढ़वाल में भी पत्रकारिता का ध्येय स्वतन्त्रता प्राप्ति व गढ़वाल की उपेक्षित जनता को सम पर लाना था।

स्वाधीनता संग्राम काल में गढ़वाल की मुख्य समस्यायें थीं- अमानवीय कुली बेगार प्रथा तथा जंगलों पर पाबन्दी के कष्ट। अपने पत्रों के द्वारा इस दौरान के सम्पादक, सरकार को जनता के कष्टों से आगाह कराते हुये जनता को न्याय के लिये गुहार करना तथा अपने अधिकारों के लिये माँग करने का रास्ता बताते थे। गढ़वाल में भी स्वाधीनता संग्राम युग के कई नायकों, समाज के उन्नायकों ने पत्रकारिता से नाता जोड़ा और समाज को अपने विचारों से प्रभावित किया। कई प्रखर सम्पादकों ने अपनी लेखनी से ब्रिटिश हुक्मरानों को बेचैन किया था। दमन के बावजूद कई सम्पादकों ने हिम्मत नहीं हारी और अपनी राह से डिगे नहीं। उनकी आग उगलती लेखनी ने स्वाधीनता आन्दोलन में इंधन का काम किया। भैरव दत्त धूलिया- 'कर्मभूमि', विश्म्बर दत्त चन्दोला- 'गढ़वाली', कृपाराम मिश्र- 'गढ़देश', महेशानन्द थपलियाल- 'उत्तर भारत' आदि सम्पादकों ने गढ़वाल के सामाजिक उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[9]

बीसवीं सदी तक पहुँचते-पहुँचते पत्रकारिता का क्षेत्र व्यापक हो गया। उन्नीसवीं सदी के अन्तिम छोर तक पत्रकारिता समाचारों तक ही सीमित रही, किन्तु बाद में पत्रकार देश की सभ्यता, सामाजिक व्यवस्था एवं आर्थिक कठिनाइयों का सही आंकलन करते हुये उनकी विसंगतियों की ओर पाठकों तथा प्रशासन का ध्यान आकर्षित कर उनमें सुधारों का सुझाव भी देने लगे थे। बीसवीं सदी तक पहुँचते-पहुँचते पत्रकारिता का बौद्धिक स्तर सर्वथा वैचारिक हो गया। बड़े नगरों से, उच्च स्तर की पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन आरम्भ होने पर राष्ट्रीय चेतना के साथ ही हिन्दी साहित्य के उन्नयन तथा प्रसार व प्रचार का मार्ग भी प्रशस्त होता गया।

स्वतन्त्रता संकल्प के उद्घोषक बाल गंगाधर तिलक का मंत्र 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' तथा महात्मा गांधी के सत्य और अहिंसा का संदेश देने वाली ऐतिहासिक अमरवाणी की गूंज पर्वतीय जन-मानस को आन्दोलित कर रही थी। गढ़वाल के प्रति अंग्रेज हाकिमों की उपेक्षा, पक्षपातपूर्ण व्यवहार, सामाजिक समस्यायें, कुली बेगार, जंगलों पर सरकार का कब्जा तथा दैनिक जीवन की कठिनाइयाँ आदि पर्वतवासियों को हतोत्साहित कर रही थीं। गढ़वाल-कुमाऊं की जनता इन समस्याओं से जूझ रही थी। देश में राष्ट्रीय आन्दोलन जोर पकड़ते जा रहे थे।

पर्वतीय क्षेत्र के बहुत से लोग राष्ट्रीय आन्दोलन के रास्ते पर चल निकले और कुछ बुद्धिजीवी देशसेवकों ने पत्रकारिता को अपनी अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बनाया। देश में राष्ट्रीय आन्दोलन जैसे-जैसे तीव्र होते गये, पहाड़ से छपनेवाले पत्रों के पृष्ठ भी दहकते गये। इन पत्रों के लिये पहाड़ी रास्तों की दुर्गमता, आर्थिक समस्यायें और सीमित साधन अवरोधक नहीं बन पाये।[10]

सन् 1901 में देहरादून में कुछ बुद्धिजीवी, समाज सुधारक तथा राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत लोगों के प्रयास से गढ़वाल सभा की स्थापना हुई। ये थे पंडित तारादत्त गैरोला, विश्म्बर दत्त चन्दोला और चन्द्रमोहन रतूडी। 'गढ़वाल सभा' का उद्देश्य था, गढ़देश की जनता में राष्ट्रीय चेतना को उजागर कर, उसे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करना और जनता की समस्याओं को प्रशासन तक पहुँचा कर उनके निवारण का प्रयास करना। यहाँ की जनता ने उत्साह से गढ़वाल सभा का स्वागत किया और 1901 में ही इसके सदस्यों की संख्या 117 हो गयी। गैरोला सभा के मंत्री, चन्दोला उपमंत्री और चन्द्रमोहन रतूडी का सहयोग प्रेरणात्मक रहा। रतूडी तत्कालीन टिहरी रियासत में जंगलात अधिकारी थे। इन तीनों देशभक्तों के प्रयास से गढ़वाल सभा गढ़वाल यूनियन अपने उद्देश्यों की पूर्ति की ओर अग्रसर होती गई। इसका प्रगतिशील तथा

विकसित स्वरूप आज देहरादून में अखिल गढ़वाल सभा के रूप में मौजूद हैं। 'गढ़वाल सभा' का नाम 1905 के बाद 'गढ़वाल यूनियन' हो गया।[11]

पर्वतीय क्षेत्र में जन-जागृति और पत्रकारिता का उदय किन परिस्थितियों में हुआ और अपने उद्देश्य की पूर्ति में कहाँ तक सफल रहा, इस विषय पर नवम्बर 1979 में सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा आयोजित विश्वम्बर दत्त चन्दोला की जन्म शताब्दी समारोह के अवसर पर सूचना विभाग द्वारा प्रकाशित उत्तर प्रदेश पत्रिका के 'चन्दोला शताब्दी विशेषांक' में तत्कालीन उपाध्यक्ष साहित्यविद् श्री ठाकुर प्रसाद सिंह के लेख के कुछ अंश प्रस्तुत हैं-

'आज जब पुराने इतिहास की खोज हो रही है तब पर्वतीय क्षेत्रों के बीच-बीच में टूटे हुये इतिहास की कड़ियाँ खोजने के लिये शोध छात्रों को उन पत्रों के अंक जुटाने पड़ेंगे जो कभी अत्यन्त उपेक्षा के बीच प्रकाशित हुये थे। श्री चन्दोला हों या श्री बद्रीदत्त पांडे या श्री नरदेव शास्त्री, पर्वतीय अभावग्रस्त बस्तियों के बीच नये जीवन की ललक जगाने का जो महत्वपूर्ण कार्य उन लोगों ने किया था उसका सही मूल्यांकन भी तभी सम्भव हो सकेगा। विभिन्न पर्वतीय क्षेत्रों में इस समय कितने ही पाक्षिक, साप्ताहिक अथवा दैनिक पत्र प्रकाशित हो रहे हैं, फिर भी मुझे यह कहने में संकोच नहीं है कि वे सभी मिलकर वह कार्य पूरा नहीं कर पा रहे हैं जो गढ़वाली अथवा शक्ति जैसे पत्रों ने कभी शुरू किया था।'[12]

20वीं शताब्दी के आरम्भिक दो दशकों में गढ़वाल के प्रमुख 4 समाचार पत्रों में गढ़वाल समाचार (1902), गढ़वाली (1905), विशाल कीर्ति (1913) व पुरूषार्थ (1918) ने इस पिछड़े हुये क्षेत्र में सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक चेतना को जागृत करने में एक शक्तिशाली माध्यम का कार्य किया। इन्होंने सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक समस्याओं को जो सामान्य जनजीवन को प्रभावित करने वाली थीं, विचार-विमर्श के द्वारा दृढ़ता के साथ प्रतिपादित किया था। इनमें मुख्य समाचार पत्रों का विवरण इस प्रकार है-

गढ़वाली मासिक

मई, 1905 में गढ़वाल यूनियन सभा द्वारा देहरादून में हिन्दी राष्ट्रीय पत्र 'गढ़वाली' का आरम्भ हुआ। पहले इसके सदस्यों के द्वारा पत्र का नाम 'उत्तराखंड समाचार' और 'गढ़वाल समाचार' प्रस्तावित किया गया किन्तु 'गढ़वाली' सरल और उपयोगी समझकर पारित कर लिया गया। 'गढ़वाल यूनियन' के पत्र के लिये पत्र की आवश्यकता का सुझाव भी चन्दोला ने गैरोला जी को दिया था, वे यूनियन के मंत्री और चन्दोला उपमंत्री थे, इस प्रकार आरम्भ से ही वे 'गढ़वाली' पत्र से जुड़े रहे।

'गढ़वाली' पत्र के लिये एक सम्पादक समिति का गठन हुआ, जिसके अनुसार पत्र का प्रबंध और लेखों का चुनाव होता था। यह पहले मासिक, फिर पाक्षिक और कुछ समय बाद साप्ताहिक हो गया जो 1952 तक रहा। इसके पहले सम्पादक पंडित गिरिजा दत्त नैथाणी कुछ वर्षों तक रहे। सन् 1910 से जुलाई, 1912 तक के अंकों में तारादत्त गैरोला सम्पादक, चन्दोला प्रकाशक और धनानन्द खण्डूड़ी मुद्रक रहे। इसके बाद सेना से इस्तीफा देकर 1952 तक चन्दोला 'गढ़वाली' पत्र के सम्पादक रहे। 'गढ़वाली' का वार्षिक मूल्य ढाई रू० और विद्यार्थियों के लिये आठ आना था। सन 1911 में 'गढ़वाली' प्रेस की स्थापना देहरादून में हो गई। इससे पहले यह आगरा, बिजनौर और बरेली से छपवाया जाता था। प्रेस के प्रबंध आदि के लिये एक लिमिटेड कम्पनी की स्थापना हुई तथा डायरेक्टर चुने गये। प्रेस के लिये शेयर माँगे गये, 585 रू० के हिस्से बिक गये। इसमें 100 रू० चन्द्रमोहन रतूडी और फीजी से बद्रीदत्त बमोला जी ने 30 रू० के हिस्से लिये। प्रत्येक हिस्सा 5 रू० का था, बाद में इसकी राशि बढ़ा दी गई। सदानन्द गैरोला का कहना था कि जितने हिस्से नहीं बिकेंगे, वे खरीद लेंगे। थोड़े ही दिनों में 1995 रूपयों के शेयर बिक गये, किन्तु पूरे रूपये वसूल नहीं हो सके। गढ़वाल यूनियन के 116 सदस्य थे, चंदे की राशि नियमित नहीं थी यह बारह आने से 3 रूपये तक रही। कुछ ही लोग थे जो 100 रूपये तक दे सके, किन्तु शेयर 200 रूपये तक के खरीदे गये।[13]

गढ़वाली समाचार पत्र से जुड़े अधिकांश सुधारवादी कार्यकर्ता बालकृष्ण गोखले की नरम दलीय नीति से प्रभावित थे। स्थानीय स्तर पर पत्र ने सामाजिक-आर्थिक-धार्मिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन को दूर करने के प्रयत्न किये थे। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय राजनीति और सुधारवादी कार्यक्रमों पर गढ़वाली के सम्पादकीय प्रमुखता के साथ प्रकाशित होते रहे। कभी-कभी अन्तर्राष्ट्रीय समाचारों को भी पत्र में स्थान दिया जाता था।[14] 'गढ़वाल यूनियन' और 'गढ़वाली' से सम्बद्ध सभी व्यक्ति गढ़वाल के सम्भ्रान्त परिवारों के शिक्षित थे। सन् 1914 में सुधारवादियों द्वारा आंचलिक पत्रकारिता को सशक्त बनाने के उद्देश्य से 'गढ़वाल समाचार' और 'विशाल कीर्ति' का 'गढ़वाली' के साथ विलय कर दिया गया। इसके स्थान पर सन् 1915 से साप्ताहिक 'गढ़वाली' पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया।

अगस्त 1916 में पंडित गिरिजादत्त नैथानी के हटने के बाद पंडित बिशम्भर दत्त चन्दोला ने सम्पादन कार्य सम्भाला। यह क्रम स्वाधीनता प्राप्ति के उपरान्त सन् 1952 तक सफलतापूर्वक चलता रहा।[15] उत्तराखण्ड की पत्रकारिता के इतिहास में 'गढ़वाली' और सम्पादक विशम्बर दत्त चन्दोला अकेले उदाहरण हैं जिसे टिहरी रियासत के नारकीय तिलाडी कांड (1930) पर लेख लिखने के आरोप में एक वर्ष का कारावास मिला था। किन्तु पत्रकारिता में नैतिकता के नाम पर उन्होंने अपने लेख के स्रोतों को उद्घाटित करना स्वीकार नहीं किया। गढ़वाली ने बेगार तथा वन कष्टों सहित सामाजिक जीवन में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त किए जाने की आवश्यकता पर बल देते हुए जन भावनाओं को उभारने में विशेष सफलता प्राप्त की थी।

पुरूषार्थ (मासिक)

गढ़वाली पत्रकारिता के जनक पं० गिरिजा दत्त नैथानी ने पत्रकारिता के माध्यम से निरन्तर सामाजिक सुधार की आवश्यकता का अनुभव करते हुये जनवरी, 1917 में दुगड्डा (गढ़वाल) से 'पुरूषार्थ' मासिक पत्र का प्रारम्भ किया था। आरम्भ में यह पत्र बिजनौर तत्पश्चात् दुगड्डा, बाराबंकी और फिर नैथाणा से भी कुछ समय तक मुद्रित किया गया।[16] किन्तु नियमित रूप से इसका प्रकाशन नहीं हो सका। अन्त में जून 1921 में पं० गिरिजादत्त नैथानी ने अपने पैतृक ग्राम नैथाणा में हैंडप्रेस पर पुरूषार्थ का पुनर्प्रकाशन किया। किन्तु आर्थिक कठिनाइयों के कारण यह पत्र सफल नहीं हो सका और अक्टूबर 1921 में इसका अन्तिम अंक प्रकाशित हुआ। 21 नवम्बर को पं० गिरिजा दत्त नैथानी के असामयिक निधन के साथ ही पत्र का प्रकाशन भी बन्द हो गया था। 21x15 से०मी० के आकार में 16 पृष्ठों के साथ 'पुरूषार्थ' प्रकाशित किया जाता रहा। विशुद्ध राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत यह पत्र गढ़वाल में सामाजिक जन-जागृति के साथ राजनैतिक चेतना को भी विकसित करने में प्रयत्नशील था।[17] वन और बेगार समस्या पर सरकार की कटु आलोचना करते हुए पं० गिरिजा दत्त नैथानी ने इसके व्यावहारिक हल निकालने के सुझाव भी दिये थे। दूसरी ओर पत्र के सहायक सम्पादक डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने गद्य शैली में लेख व कविताओं को लिखकर स्थानीय चेतना को राष्ट्रीय चेतना की मूलधारा के साथ जोड़ने का प्रयत्न भी किया था।

विशाल कीर्ति (मासिक)

गढ़वाल के इस मासिक पत्र का प्रकाशन सदानन्द कुकरेती के सम्पादन में फरवरी 1913 में पौड़ी से प्रारम्भ किया था। बदरी केदारेश्वर प्रेस से प्रकाशित होने वाले इस पत्र के प्रकाशक ब्रहानन्द थपलियाल थे। 25 x 16 से०मी० के आकार में मुद्रित पत्र में 16 से 20 तक पृष्ठ होते थे। यह पत्र लगभग 5 वर्ष तक प्रकाशित होता रहा। इसका अन्तिम अंक, सितम्बर 1917 में प्रकाशित हुआ।[18]

यह पत्र पूर्णतः सामाजिक सुधारों पर केन्द्रित था। विशेषकर गढ़वाली भाषा के गद्य-पद्य साहित्य के उत्थान के लिए सम्पादक कुकरेती ने नए लेखकों को प्रोत्साहित किया। प्रशासनिक विसंगतियों पर व्यंगात्मक लेख लिखने के कारण यह पत्र अधिकारियों की आँख का काँटा बन गया था। इनकी व्यंग्य शैली चुटीली, भाषा लच्छेदार तथा जन साधारण को प्रभावित करने वाली थी। 'विशाल कीर्ति' के 'गढ़वाल ठाठ' स्तम्भ के अन्तर्गत पं० सदानन्द कुकरेती की गद्य-पद्य रचनायें प्रकाशित होती थी। इसके अन्तर्गत प्रहसनपूर्ण चुटकुलों की प्रधानता रहने के कारण महिलाएं व बच्चे इसे चाव से पढ़ते थे। इसके अतिरिक्त इसमें उर्दू मुहावरों का प्रचुरता में प्रयोग किया जाता था।[19]

अंग्रेज अधिकारियों के विरूद्ध द्विअर्थी भाषा में लिखने के कारण कुकरेती पर मुकदमा भी नहीं किया जा सका। अनेक सरकारपरस्त नेताओं द्वारा प्रलोभन दिये जाने के प्रयत्न किये गये लेकिन पं० सदानन्द अपनी पत्रकारिता मिशन के मार्ग से विचलित नहीं हुए। 'गढ़वाल समाचार' और 'गढ़वाली' मासिक पत्रों की तरह 'विशाल कीर्ति' में भी विज्ञापनों को महत्व दिया गया। पत्र की नियमावली के अनुसार पत्र का वार्षिक मूल्य 1 रूपये निर्धारित किया गया था, किन्तु सम्भ्रान्त व्यक्तियों के सम्मानार्थ उनसे 3 रूपये लिया जाता था। पत्र में राजनीतिक और अश्लील लेखों को छोड़कर सभी प्रकार के लेख आमन्त्रित किए जाते थे। लेख को प्रकाशित व अप्रकाशित तथा संशोधित करने का अन्तिम अधिकार सम्पादक को था। अप्रकाशित लेख वापस मंगाने के लिए लेखक को डाकखर्च भेजना अनिवार्य था। सम्पूर्ण पृष्ठ की विज्ञापन दरें, एक बार, 3 मास, 6 मास व वर्ष भर के लिए क्रमशः 4, 10, 20 व 25 रूपये निर्धारित की गई थी।[20]

तरूण कुमाऊँ

'तरूण कुमाऊँ', मासिक पत्र जुलाई 1922 से मई 1924 तक छपता रहा। इसके सम्पादक बैरिस्टर मुकन्दी लाल थे। जुलाई 1922 से सितम्बर 1923 तक 'तरूण कुमाऊँ' 'गढ़वाली प्रेस' देहरादून से मुद्रित और प्रकाशित होता रहा। इसके पश्चात् भास्कर प्रेस देहरादून में छापा गया। इसका वार्षिक मूल्य 3 रूपया था। देशव्यापी राजनैतिक उथल-पुथल पर सतर्क दृष्टि रखते हुये 'तरूण

कुमाऊँ' के द्वारा बैरिस्टर मुकन्दी लाल ने गढ़वाल-कुमाऊँ की सामाजिक दशा को सुधारने व मूलभूत समस्याओं को उजागर करते हुये उनके निवारण के लिये अंग्रेज अधिकारियों से जोरदार हिमायत की।[21]

क्षत्रियवीर

सन् 1923 से ठाकुर प्रताप सिंह नेगी के सम्पादन में पौड़ी से 'क्षत्रियवीर' पाक्षिक पत्र का प्रकाशन आरम्भ हुआ। ठाकुर हनुमन्त सिंह रघुवंशी द्वारा ओरियंटल प्रेस आगरा में छापा गया। 'क्षत्रियवीर' 1936 तक छपता रहा। 1934 में इसके सम्पादक ठाकुर कोतवाल सिंह नेगी थे। सन् 1927 में कुँवर गजेन्द्र सिंह रघुवंशी द्वारा राजपूत ऐंग्लो ओरियंटल प्रेस, मदन मोहन दरवाजा, आगरा से छापा गया।[22]

'क्षत्रियवीर' ने गढ़वाल की समस्याओं को प्रमुखता से उठाया। सामाजिक उत्थान व शैक्षिक जागरूकता पर बल देते हुये, गाँवों के सुधार, कृषि उत्पादन, पहाड़ी भूमि के उपजाऊ तरीकों पर भी कृषकों का ध्यान आकर्षित करता रहा। पत्र महिलाओं को समाज में ऊंचा स्थान दिलाने का पक्षपाती था। कुल मिलाकर कहें तो 'क्षत्रियवीर' ने गढ़वाल की हर सामाजिक समस्या को उठाकर यहाँ के उत्थान में अपनी भूमिका निभाई।

गढ़देश

'गढ़देश' साप्ताहिक पत्र था जो 1926 में कोटद्वार से प्रकाशित हुआ। इसके सम्पादक और प्रकाशक पण्डित कृपाराम मिश्र 'मनहर' थे। पहले यह पं० कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर के प्रेस सहारनपुर में छपा, फिर लाला शीतला प्रसाद विद्यार्थी द्वारा उनके अपने 'शांति प्रिंटिग प्रेस' सहारनपुर में छपता रहा। इसे कुछ समय तक देहरादून में स्वामी विचारानन्द सरस्वती के 'अभय प्रेस' में छापा गया। यह पत्र 1932 तक निरंतर प्रकाशित होता रहा। अपने प्रकाशन काल में इसने गढ़वाल की हर सामाजिक समस्याओं को सशक्त रूप से उठाया। यह राष्ट्रवादी पत्र था। कृपाराम मिश्र स्वयं राष्ट्रभक्त, प्रगतिशील, उत्साही व्यक्ति थे। अंग्रेज प्रशासन की अनीति और अन्याय की कड़ी निन्दा करते हुये जनता को स्वतन्त्रता संग्राम के लिए उत्साहित करते थे।[23]

गढ़वाल हितैषी

पण्डित पीताम्बर दत्त पसबोला के सम्पादकत्व व प्रकाशन में प्रकाशित 'गढ़वाल हितैषी' के नाम से ही पता चलता है कि इस पत्र के प्रकाशन का उद्देश्य ही गढ़वाल का हित था। 'गढ़वाल हितैषी' पत्र सन् 1930 में लैन्सडाऊन से प्रकाशित हुआ। यह पाक्षिक पत्र था तथा 1937 तक प्रकाशित होता रहा। पत्र के सम्पादक पसबोला एक जाने-माने एडवोकेट भी थे।[24] पत्र ने गढ़वाल की सामाजिक समस्याओं को लगातार प्रकाशित किया और यहाँ की सामाजिक-राजनैतिक चेतना में भी योगदान दिया।

उत्तर भारत

'उत्तर भारत' साप्ताहिक पत्र था जो सन् 1936 से पौड़ी से प्रकाशित होना आरम्भ हुआ। पत्र के सम्पादक महेशानन्द थपलियाल तथा मुद्रक व प्रकाशक अनुसूया प्रसाद बहुगुणा थे, जो चर्चित एडवोकेट भी थे। पत्र पौड़ी के 'उत्तर भारत प्रेस' से छपता था। रमेश चन्द्र नौटियाल भी कुछ समय तक इसके संयुक्त सम्पादक रहे। 1940 में इसके मुद्रक और प्रकाशक चन्द्रमोहन थपलियाल हो गये। तब यह 'गढ़वाल फाइन आर्ट प्रेस' पौड़ी से छपने लगा था।[25]

'उत्तर भारत' के मुख पृष्ठ पर ही 'वन्देमातरम्' का उद्घोश तथा महात्मा गांधी, राजेन्द्र प्रसाद और चक्रवर्ती राजगोपालचारी के चित्र थे। तिलक और गांधी की 'अमरवाणी' 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' और 'अहिंसा सत्य और त्याग हमारे साधन हैं', से पत्र का आरम्भ होता। 'उत्तर भारत' की आर्थिक व्यवस्था ठीक न होने के कारण सन् 1940 में यह पत्र 'नवभारत समाचार' में सम्मिलित हो गया। अपने कार्यकाल में इस पत्र ने भी गढ़वाल के समाज सुधार आन्दोलनों में काफी सक्रियता निभाई।

स्वतंत्रता पूर्व पत्रों में सामाजिक सुधार समाचार

गढ़वाल में राजनैतिक चेतना के अंकुरण से पूर्व आंचलिक पत्रकारिता के माध्यम से सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक चेतना के अभ्युदय का मार्ग प्रशस्त हो चुका था। इससे सम्बद्ध लेखक, पत्रकार और सुधारवादी व्यक्ति एकमत से इस अंचल की सांस्कृतिक एकता को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए प्रयत्नशील थे। अपनी मातृभूमि के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक उत्थान के लिए इनकी चिन्ता तत्कालीन समाचार पत्रों में प्रकाशित लेख, नाटक, कविताओं आदि में स्पष्ट परिलक्षित होती थी।[26] ये पत्र विशेषतः सांस्कृतिक विशिष्टता के प्रति सचेत थे, और इन्होंने गढ़वाल में राष्ट्रवादी भावनाओं को पुष्ट किया।[27]

गढ़वाल की पत्रकारिता के माध्यम से इन सुधारवादियों ने गढ़वाली सामाजिक जीवन में फैली कुरीतियों, कन्या विक्रय, छुआछूत, जातीय संकीर्णता, पशुबलि, आदि का विरोध किया। इन्होंने सामाजिक स्तर के उत्थान के लिए शासन ने अनुरोध किया। इस दृष्टि से 'गढ़वाली' समाचार पत्र ने सर्वप्रथम 1908 में कन्याओं

के नारकीय ढंग से विक्रय के विरोध में लिखना प्रारम्भ किया। साथ ही इस तरह के घृणित कार्यों में लगे असामाजिक तत्वों को सरकारी संरक्षण दिये जाने के प्रति सन्देह और रोष भी जताया। 'गढ़वाली' पत्र के एक सम्पादकीय लेख में गिरिजादत्त नैथानी ने इसका उल्लेख करते हुए प्रशासन से इस समस्या का हल निकालने हेतु लिखा- 'कुछ वर्षों से गढ़वाल गंगा की उदयपुर पट्टी में कन्याओं का व्यापार बड़े धड़ल्ले से चल रहा है। बम्बई व पंजाब के भाटिये और जाट दो हजार की थैली अथवा जितने में भी सौदा पटे, कन्यावालों को देकर लड़कियाँ खरीदते हैं। उस वक्त बड़ा ही हृदय विदारक दृश्य होता है। कोई लड़की अपने बालों को नोचती है और कोई सिर फोड़ डालती है। ये लड़कियाँ जो अपने राक्षस पिता अथवा भाई द्वारा बेची जाती हैं कितनी दुखित होती हैं कि इसकी उपमा सिर्फ काला पानी के कैदियों से की जा सकती है। प्रत्यक्ष रूप से यह करार दिया जाता है कि ब्याह किया है किन्तु यह सरासर धोखा है, इस बात के अव्वल सबूत हैं। अव्वल ब्याह का कुछ भी संस्कार नहीं किया जाता। यदि वह ब्याह होता है तो पटवारी और गाँव के पासवान को हक मिलता है। खरीदने वाले की खुशी है कि वह फिर लड़की चाहे जिस व्यक्ति के हाथ बेच दें। सुनते हैं कि बहुत सी लड़कियाँ कई घरों में बेची गई। यह बात सबूत पेश करती हैं कि ब्रिटिश राज में अबोध कन्याओं का व्यापार ब्याह की आड़ में चल रहा है। यदि इन निष्ठुर व्यक्तियों में से किसी एक को सजा मिल जाय तो आइंदा (भविष्य में) ऐसा व्यापार बंद हो जायेगा अबोध बालिकाओं के सिर का यह दुःख दूर हो जायेगा।'[28]

गढ़वाल से प्रकाशित एक सम्मानित व प्रचलित पत्र 'गढ़वाली' के सम्पादक व प्रमुख सदस्य विश्वम्बरदत्त चन्दोला सन् 1913 में पहाड़ी कन्याओं की दुर्दशा का अध्ययन करने बम्बई गए। वहाँ से वापस लौटकर उन्होंने अपने लेखों में इस नारकीय और घृणित कुप्रथा को समाप्त करने के लिए कानून बनाये जाने की माँग की थी।[29] उनके लेखों व समाचारों से प्रभावित होकर टिहरी के तत्कालीन राजा कीर्तिशाह ने इस कुप्रथा पर रोक लगाने के लिए कानून बनाया, जिससे इस कुप्रथा पर काफी प्रभाव पड़ा और इसका असर पूरे गढ़वाल क्षेत्र पर दिखाई दिया।

पहाड़ी क्षेत्र के पत्र और पत्रकार गढ़वाल में सुधारवादी आन्दोलनों को प्रभावशाली बनाने के लिए और जनता में चेतना लाने हेतु शिक्षा को माध्यम बनाने के पक्ष में थे। वे सामाजिक स्तर ऊँचा करने व समाज सुधार में शिक्षा को महत्वूपर्ण साधन मानते थे और जनता को इसकी आवश्यकता और महत्ता से भी परिचित कराने की दिशा में प्रयत्नशील थे। गढ़वाली पत्र में प्रकाशित एक लेख में उक्त भावनाओं को व्यक्त करते हुए लिखा गया था - 'इस समय चारों ओर उन्नति की जा रही है। गत पाँच वर्षों के अन्दर भारत की कला-कौशल आदि समस्त शिक्षाओं की बहुत उन्नति हुई है। स्वदेशी आन्दोलन की व्याख्या कोई कुछ करते हों किन्तु उसका सच्चा अर्थ यही है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी उन्नति करे। हमारा विस्तृत गढ़वाल विद्या से कोसों दूर हैं, वह अभी विद्या के फायदों को प्रायः कुछ भी नहीं जानता है। बडी लज्जा की बात है कि अब तक हमारे यहाँ केवल 5-6 सज्जन ही ग्रेजुएट हो सके हैं। कुछ वर्षों से हिन्दी मिडिल में गढ़वाल के सौ-सवा सौ विद्यार्थी अब प्रतिवर्ष पास हो रहे हैं किन्तु अगाडी (आगे) पढ़ाने का उत्साह उनके मां-बापों को नहीं है, जिससे बीसियों युवा शिक्षा की कामना करते हुऐ भी यहीं पर इतिश्री करके रह जाते हैं। अगर इन लड़कों के माता-पिता को उत्साह दिलाया जाए और यदि अधिक न पढ़ा सकें तो स्कूल करा दें, इससे विद्यार्थी समाज का कुछ तो फायदा होगा। यदि आप लोग अपने देश की उन्नति चाहते हैं तो विद्यादेवी को मनाओ। थोड़े ही समय में तुम्हारी सरकार तुम्हारे विद्यार्थियों की बढ़ती संख्या देखकर कालेज भी खोल देगी और तब तुम देखोगे कि तुम्हारी संतान कितनी योग्य बनती है, तथा तुम्हारा गढ़वाल किस वास्तविक उन्नति को प्राप्त होता है।'[30]

गढ़वाल के जातीय संघों की स्थापना के सिद्धान्त का विरोध करते हुए समाचार पत्रों ने इससे सामाजिक जीवन में कलह प्रकट होने की आशंका व्यक्त की थी। गढ़वाल समाचार ने जनभावनाओं को व्यक्त करते हुए लिखा था- 'गढ़वाल के लिए एकता की आवश्यकता है। सब सभाओं (जातीय संघ) का आपस में मिल जाना, फिर एक-दूसरे को भाई समझना, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों द्वारा साथ बैठकर एक ही हुक्के पर तम्बाकू पीना, एक पंक्ति पर बैठकर सबका भात खाना, आह क्या आनन्ददायक दृश्य हैं जो सच्चे गढ़वाली हैं वे इन दृश्यों से कभी महरूम नहीं होने चाहिए। गढ़वाल में जहाँ पहले प्रेम का साम्राज्य था, अब घृणा व द्वेष का नरकुंड बन गया। अब भी सुधरने से काम सुधर सकता है। परस्पर एक-दूसरे को क्षमा करें। गढ़वाल को फिर स्वर्गधाम बनायें।'[31] गढ़वाल में राष्ट्रवादी भावनाओं का प्रचार-प्रसार करने में इन समाचार पत्रों की अभिरूचि इस बात का संकेत थी कि प्रबुद्ध वर्ग स्थानीय प्रश्नों और समस्याओं के साथ ही गढ़वाल को राष्ट्रीय मूलधारा से जोड़ना चाहता था। इस प्रकार क्षेत्रीयता से ऊपर उठकर व्यापक राष्ट्रवादी भावनायें शिक्षित वर्ग में उभर रही थीं। 'गढ़वाली' के एक लेख में बैरिस्टर मुकन्दीलाल ने लिखा था-

'हम सब गढ़वाली एक ही राष्ट्र के कहे जाने योग्य हैं या

नहीं? अथवा यह कि गढ़वाल में एक ही राष्ट्र में संगठित होने का कितना सुभीता (लाभ) व सम्मान है। एक ही राष्ट्र में एकत्रित होने से और एक राष्ट्रीय सभा बनाने से उसके द्वारा देश की उन्नति करना और अपने बान्धवों की सेवा करना इत्यादि अनेक लाभ होते हैं। सारे भारतवर्ष की हिन्दू जाति का जो अद्वितीय इतिहास है, वही इतिहास और उसकी शाखा गढ़वाल है। हमारे आदि पुरूष आर्य लोग थे, हम सब उनकी संतान हैं और हमारे साथ देश के प्राचीन असली वाशिन्दों (निवासियों) का हमसे बड़ा संसर्ग रहने के कारण व हमारे साथ बसने से वे भी अब हमारे ही हो गए। इसलिए शिल्पकार जंगली कौमों और मुसलमानों को इस राष्ट्रीय वृक्ष की छाया से वंचित करना किसी भी उदार पुरूष व सच्चे देशभक्त को अच्छा नहीं लगेगा और इनको अलग रखने से हमारे राष्ट्र की शक्ति कम होगी।'[32]

गढ़वाल के इन समाचार पत्रों ने उत्तराखण्ड की अपमानजनक प्रथा 'बेगार' को समाप्त किए जाने की सरकार से माँग की। इन पत्रों ने कुमाऊं में इस कुप्रथा के विरोध में चलाए जाने वाले आन्दोलन का भी समर्थन किया।[33] इन्होंने आम जनता के लिए भूमि तथा जंगलों के सम्बन्ध में अपनायी गई दुःखदायी बन्दोबस्त नीति का विरोध करते हुए, वनों के साथ जनता की परम्परागत भागीदारी को बढ़ाये जाने से सम्बन्धित प्रश्नों को भी उठाया। गढ़वाली समाचार पत्र ने वसूले जाने से उत्पन्न कष्टों का वर्णन कर समस्या का हल निकालने हेतु सरकार से अनुरोध करके लिखा था कि- 'प्रत्येक गढ़वाली, गढ़वाली ही क्या प्रत्येक आदमी या पशु भी यह चाहता है कि उसकी इच्छा के विरूद्ध उससे काम न लिया जाय, इसलिए बेगार का दस्तूर बडा ही दुःखद है। इस बुरी प्रथा को हटाने का प्रयत्न करना नितान्त आवश्यक है और प्रत्येक देश हितैषी का यह कर्तव्य है। बेगार गुलामी का अंग है। अतएव बेगार की बुराई के बाबत निवेदन करना है कि जिन अंग्रेजों के राज्य में गुलामी की प्रथा (दास प्रथा) जिस किसी तरह भी समाप्त कर ली गई है, उन्हीं अंग्रेजों के राज्य में गुलामी का छोटा भाई बेगार दूर न हो, ऐसा विश्वास कभी नहीं हो सकता। मर्द परदेश में है, स्त्री घर पर और बेगार की उस पर बारी आ गई है। आह! यह कैसी आफत है। अपनी बारी पूरी करने के लिए किसको भेजें? इधर प्रधान धमकाता है, उधर चमासी (चपरासी) आँख दिखाता है। अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि हमारे कुमाऊं प्रदेश में ऐसी दुखिनी विधवा अथवा सधवा औरतें भी बेगार में पकड़ी जाती हैं। अंग्रेजी राज्य के लिए इससे अधिक लज्जाजनक और क्या बात हो सकती है जहाँ औरतों के ऊपर भी ऐसा अत्याचार होता हो।'[34]

गढ़वाल में बेगार बलपूर्वक कराया जाता था। इस सामाजिक समस्या के हल के लिए तारादत्त गैरोला के प्रस्ताव पर कुली एजेन्सी खोली गई। उत्तराखण्ड में नवीन भू-व्यवस्था और वननीति के फलस्वरूप वन सम्पदा पर जनता के परम्परागत अधिकारों को सीमित किया गया था। तत्कालीन उत्तराखण्ड की पत्रकारिता ने नवीन भू-व्यवस्था से उत्पन्न ग्रामीण जनता के आर्थिक कष्टों के विरोध में जनभावनाओं से प्रशासन को अवगत कराकर इनके निराकरण के लिए वन एवं भू-व्यवस्था में परिवर्तन किए जाने की माँग की थी। जनता के द्वारा प्रान्तीय गर्वनर के नाम ज्ञापन का उल्लेख करते हुए गढ़वाल समाचार पत्र ने लिखा था- 'गढ़वाल जिले में बन्दोबस्त बड़े जमींदारों के साथ नहीं हुआ बल्कि हम जैसे किसान हिस्सेदारों के साथ (छोटे जमींदार) जो जंगल में रहते हैं, हुआ है। मिस्टर ट्रेल साहब के सन् 1833 के बन्दोबस्त से, जिसे फिर बैटन साहब ने 1844 और बेकेट साहब ने 1862 में किया था हमेशा इस पहाड़ी जिले का तमाम रकवा गाँव की हकबन्दी में तकसीम किया गया है। किन्तु पौ के बन्दोबस्त में एक इकरारनामे में हस्ताक्षर कर समस्त बेनाम भूमि पर सरकार का नियन्त्रण स्वीकार करवाया गया और गाँव वाले चराई तथा लकड़ी के हक (सिर्फ अपने काम के लिए न कि बेचने के लिए) का ही उपयोग कर सकेंगे। इससे बेनाप जमीन प्राप्त करने में, मवेशी चुगाने में, जलाने की लकड़ी काटने में, लाने में, बाँस, रिंगाल को घर के तथा काश्त के खर्च के लिए काम में लाने में बड़ी-बड़ी बाधायें पैदा कर दी गई हैं।'[35] इससे एक ओर जहाँ ग्रामीणों की अर्थव्यवस्था प्रभावित हो रही थी, वहीं दूसरी ओर प्रशासन के विरोध में जन-प्रतिरोध की भूमिका तनावों को जन्म दे रही थी।

सामाजिक सुधारों के सन्दर्भ में आंचलिक पत्रों ने जीवन के कुछ रूढ़िवादी और पारम्परिक तरीकों का ही प्रतिपादन करने में अपना दृष्टिकोण व्यक्त किया। पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित सुधारों को इन पत्रों ने धोखा की दृष्टि से देखा था। गढ़वाली मासिक पत्र में प्रकाशित एक सम्पादकीय लेख में इन्हीं भावनाओं को पुष्ट करते हुये तारादत्त गैरोला ने लिखा था- 'हेट, कोट, पैंट पहननेवाली समाज सुधार की हवा पिछले समय में बंगाल आदि प्रान्तों में फैली थी, किन्तु वहाँ से भी धकेल दी गई है। इसका एक वेग हमारे पहाड़ी प्रदेश की ओर आता था, किन्तु इसके विशाल पहाड़ों से ऐसी टक्कर लगी कि इसका सारा समूह छिन्न-भिन्न हो गया और जो कुछ बचा-बचाया था वह दक्षिणी समुद्र में समाप्त हुआ। समाज सुधारों को लेकर आजकल खूब वाद-विवाद हो रहा है। एक कहता है कि ब्याह-शादी

की प्रचलित प्रथा में अदल-बदल प्रथम और मुख्य उद्देश्य समाज सुधारों का होना चाहिए। दूसरा कहता है- नहीं, खानपान की रीतियों की ओर सबसे पहले ध्यान देना चाहिए तो तीसरा कहता है- नहीं साहब, आप भूल गए हैं, स्त्री शिक्षा ही मुख्य है। स्त्रियों के हाथ में सन्तान की शिक्षा ही नहीं हमारे सारे देश की शिक्षा की कुंजी है और जब तक वह सुशिक्षित नहीं होगी, कभी देश की उन्नति हो ही नहीं सकती। चौथा कहता है- आप लोग सब भाँग के नशे में अपनी बुद्धि खो बैठे हैं, इसमें आप लोगों का दोष नही है, दोष समय का है। कलियुग का प्रभाव है, जैसे हमारे पिछले करते आए हैं, हमें भी उसी रास्ते पर चलना चाहिए। ब्राह्मणों की सेवा, तीर्थ यात्रा आदि जो पूर्व प्रथा है, उन्हीं के अनुसार चलना अति उत्तम व लाभदायक है।'[36]

20वीं शताब्दी के इन आरम्भिक दशकों में गढ़वाली पत्रकारिता ने ऐसे व्यक्ति अथवा संगठनों के क्रियाकलापों को भी प्रमुखता दी, जो सामाजिक कार्यों में संलग्न थे। साथ ही इन पत्रों ने अवांछनीय वृद्ध विवाह, कन्या विक्रय, और घड़ियाल आदि कुरीतियों के उन्मूलन के लिए प्रयत्न किए। गिरिजादत्त नैथानी के संपादकत्व में प्रकाशित 'गढ़वाल समाचार' और 'गढ़वाली' पत्रों ने जातीय संघों पर, जो सामाजिक सौहाद्र के लिए घातक थे और अर्न्तजातीय विद्वेष फैला रहे थे, तीक्ष्ण प्रहार किए। कालान्तर में जब अंग्रेजों की कूटनीति के फलस्वरूप जातीय वैमनस्यता, विशेषतः गढ़वाल में, सर उठाने लगी, तब इन पत्रों ने पूरे उत्साह व लगन से जातिवादी कुचक्रों के प्रति जनता को सचेत किया।'[37]

20वीं शताब्दी के आरम्भिक चरण में देशभर में चल रहे पुनर्जागरण आन्दोलन की लहर से गढ़वाल सम्भाग भी प्रभावित हुआ। प्रथम बार पर्वतीय सम्भाग से बाहर निकलकर गढ़वाली युवकों ने उच्च शैक्षिक केन्द्रों में शिक्षा प्राप्त की। इन्होंने वापस लौटकर गढ़वाल के पिछड़ेपन को दूर करने के प्रयत्न किए। गढ़वाल के इन सुधारवादियों का मत था कि शिक्षा के माध्यम से यहां के समाजिक व धार्मिक जीवन की कुरीतियों और विसंगतियों को दूर किया जा सकता है। फलस्वरूप मिशन ने गढ़वाल में धार्मिक प्रचार की अपेक्षा सामाजिक समस्याओं के हल के लिए प्रयत्न प्रारम्भ किए।'[38]

गढ़वाल में स्वतंत्रता से पूर्व की पत्रकारिता का दूसरा चरण सन् 1900 से सन् 1939 तक माना जाता है। इसी कालखण्ड में यहाँ पत्रकारिता में उतार-चढ़ाव देखे गये। स्वराज्य प्राप्ति के लिए लड़ी गयी लड़ाई के सन्दर्भ में उद्देश्यपूर्ण पत्रकारिता की शुरूआत इसी अवधि में हुई। 'शक्ति', 'गढ़वाली', 'गढ़वाल समाचार', 'स्वाधीन प्रजा', 'तरूण कुमाऊँ', 'गढ़देश', 'जागृत जनता', 'उत्तर भारत' जैसे पत्र इसी कालखण्ड में प्रकाशित हुए।[39]

स्वतन्त्रता से पूर्व का अंतिम व तीसरा चरण सन् 1940 से 1947 की अवधि का माना जाता है। अंग्रेजों भारत छोड़ो और पूर्ण स्वराज्य की माँग का यही दौर था। स्वाधीनता आन्दोलन में हजारों राष्ट्रभक्तों, सम्पादकों/पत्रकारों ने जेल जाकर स्वाधीनता संग्राम में अपनी उपस्थिति दर्ज करायी।[40]

इस प्रकार कुल देखा जाय तो बीसवीं सदी में स्वतन्त्रता से पूर्व की पत्रकारिता को एक तरफ अंग्रेजी सरकार की कारगुजारी से लड़ना पड़ रहा था तो दूसरी ओर गढ़वाल में समाज के पिछड़ेपन के कारणों पर भी ध्यानाकर्षण करना पड़ रहा था। इस काल में गढ़वाल की पत्रकारिता को अंग्रेजी हुकूमत द्वारा सामाजिक उत्पीड़न और शोषण-जैसे कुलीबेगार, बेगार प्रभुसेवा और हक-हकूकों के हनन जैसे मुद्दों की लड़ाई लड़नी पड़ रही थी वहीं गढ़वाल में व्याप्त डोला पालकी, कन्याओं की बिक्री आदि सामाजिक कुरूतियों का भी सामना करना पड़ रहा था।

2. स्वतन्त्रता पश्चात् पत्रों में सामाजिक सुधार समाचार

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व प्रकाशित समाचार पत्रों में से कुछ ही पत्र 15 अगस्त 1947 को आजादी का जश्न मना सके। ऐसे समाचार पत्र गिने-चुने ही थे, जो स्वतन्त्रता से पूर्व प्रकाशित होते थे और स्वतन्त्रता के बाद तक बराबर प्रकाशित होते रहे। जैसे- कोटद्वार से 'कर्मभूमि', देहरादून से 'गढ़वाली' मसूरी से 'द हैराल्ड वीकली' और 'द मसूरी टाइम्स'। इनमें से 'द हैराल्ड वीकली' और 'द मसूरी टाइम्स' स्वतन्त्रता युग में कुछ समय तक चलने के बाद बन्द हो गए। 'समता', 'स्वाधीन प्रजा' का थोड़े अन्तराल के बाद पुनः प्रकाशन हुआ, जबकि 'दून समाचार' (देहरादून) और 'द मसूरी टाइम्स' (मसूरी) का लम्बे अन्तराल के बाद पुनः प्रकाशन हुआ। 'जागृत जनता' का प्रकाशन इसके सम्पादक कामरेड पीताम्बर पाण्डे के निधन के साथ ही ठप्प हो गया। कोटद्वार से प्रकाशित 'कर्मभूमि' के सम्पादक भैरव दत्त धूलिया के अवसान के बाद उनके सुपुत्र शरदचन्द्र धूलिया ने पुनः प्रकाशन किया। कुछ समय तक प्रकाशित होने के बाद यह पत्र बन्द हो गया।[41] देहरादून से प्रकाशित 'गढ़वाली' के सम्पादक विशम्बर दत्त चन्दोला के निधन पर अल्पविराम लग गया, लेकिन कुछ समय पश्चात् उनकी पुत्री ललिता वैष्णव चन्दोला ने 'गढ़वाली' का प्रकाशन शुरू कर किया। और एक दिन वह पत्र भी हमेशा के लिए बन्द हो गया।

धीरे-धीरे पत्रकारिता का क्षेत्र बढ़ता गया, लिखने और

बोलने की आजादी भी बढ़ने लगी। स्वतन्त्रता के पश्चात की पत्रकारिता का प्रथम दौर शुरू हो चुका था। इस दौर में उत्तराखण्ड में कुछ पत्रकार प्रमुख थे जैसे- अमीर चन्द बम्बवाल, सतपाल पॉधी, पण्डित खुशदिल, सत्य प्रसाद रतूडी, प्रो० लेखराज उल्फत आदि थे। तत्पश्चात् दूसरा दौर शुरू हुआ, जिसमें पत्रकारिता ने गति पकड़ ली और वह दिन-दोगनी, रात चौगुनी के रूप में आगे बढ़ने लगी।[42]

स्वतन्त्रता के बाद गढ़वाल क्षेत्र में हुए समाज सुधारों की बदौलत ही आज गढ़वाल का समाज एक आधुनिक समाज में परिवर्तित है और विश्व में एक सभ्य समाज के रूप में विचरण कर रहा है। स्वतन्त्रता के बाद पत्रकारिता में आयी क्रांति ने समाज को एक नया मुकाम दिया। सामाजिक मुद्दों को उजागर करने में पत्रकारिता ने बेहिचक कार्य किया। स्वतन्त्रता के बाद गढ़वाल क्षेत्र की मुख्य सामाजिक समस्यायें व मुद्दे इस प्रकार थे- टिहरी का राजशाही शासन, टिहरी बांध निर्माण से उत्पन्न पुनर्वास-विस्थापन की समस्यायें एवं सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव, उत्तराखण्ड राज्य प्राप्ति के लिए समय-समय पर किये गये आन्दोलन तथा सड़क-पानी-बिजली-स्वास्थ्य-शिक्षा- रोजगार आदि।

स्वतन्त्रता के पश्चात गढ़वाल क्षेत्र से प्रकाशित होने वाले कुछ प्रमुख पत्रों का संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है, जिन्होंने समय-समय पर गढ़वाल की सामाजिक समस्याओं के लिए लड़ाई लड़ी और समाज के प्रहरी के रूप में कार्य किया।

देवभूमि (साप्ताहिक)

यह पत्र सन् 1953 में चमोली से प्रकाशित हुआ। यह चमोली से प्रकाशित होने वाला एकमात्र साप्ताहिक पत्र था। पत्रकारिता के आधार स्तम्भ और स्वाधीनता संग्रामी राम प्रसाद बहुगुणा ने नन्दप्रयाग जिला चमोली में इस पत्र की स्थापना की थी। सीमान्त जनपद चमोली के पिछड़ेपन और उत्तराखण्ड राज्य के औचित्य के प्रश्न पर यह पत्र समय-समय पर लिखता रहा। जनपद के विकास व समाज सुधार से सम्बन्धित मुद्दों को सरकार तक पहुँचाने में यह अव्वल रहा। देवभूमि ने गढ़वाल के धार्मिक और सांस्कृतिक अतीत के दर्शन करवाये।[43]

उत्तराखण्ड आब्जर्वर

उत्तराखण्ड आब्जर्वर एक साप्ताहिक पत्र है। यह सन् 1964 में चमोली जनपद से प्रकाशित होने वाला दूसरा साप्ताहिक पत्र है। इसके प्रकाशक और सम्पादक धनन्जय भट्ट थे। वर्षों की लम्बी यात्रा में 'उत्तराखण्ड आब्जर्वर' ने आंचलिक पत्रकारिता में नए आयाम प्रस्तुत किए हैं। स्थानीय समस्याओं को लेकर जैसे- चिपको, शराबबन्दी, वनान्दोलन आदि पर इस पत्र ने काफी समाचार प्रकाशित किये। पत्र के प्रकाशक व सम्पादक धनंजय भट्ट की मृत्यु के बाद उनके भतीजे क्रांति भट्ट ने इसे विधिवत प्रकाशित किया।[44]

औली समाचार (पाक्षिक)

'औली समाचार' पाक्षिक समाचार पत्र था, जो चमोली जनपद के जोशीमठ से सन् 2001 प्रकाशित होना प्रारम्भ हुआ। पत्र के सम्पादक देश के जाने-माने पत्रकार हरीश चन्दोला हैं। स्वामित्व और प्रकाशन रमेश चन्द्र सती का है। इसने जनपद की सामाजिक-सांस्कृतिक समस्याओं को उजागर करने के साथ-साथ प्रदेश के कई राजनैतिक-सामाजिक मुद्दों को प्रमुखता से उठाया।[45]

गढ़ रैबार (साप्ताहिक)

'गढ़ रैबार' सन् 1973 में उत्तरकाशी जनपद से अस्तित्व में आने के बाद का सबसे पहला साप्ताहिक समाचार पत्र था। पत्र के सम्पादक सुरेन्द्र भट्ट हैं, पत्र अब मासिक पत्रिका के रूप में प्रकाशित हो रहा है। इसने जनपद की कई मूलभूत समस्याओं को उजागर किया। साथ ही 1991 में उत्तरकाशी के नैताला, भटवाड़ी में आये भूकम्प की त्रासदी को जनपद के बाहर तक पहुंचाने में भी काफी सक्रियता दिखाई।[46]

पर्वतवाणी (साप्ताहिक)

यह पत्र 2 अक्टूबर 1974 को उत्तरकाशी जनपद मुख्यालय के निकट ग्यानसू गाँव से प्रकाशित किया गया। पत्र साप्ताहिक था तथा पत्र के सम्पादक पीताम्बर दत्त जोशी थे। पीताम्बर दत्त जोशी ने उत्तरकाशी में चेतना नाम से प्रिन्टिग प्रेस खोला तथा 'पर्वतवाणी' पत्र का प्रकाशन किया। 'पर्वतवाणी' ने स्थानीय बिन्दुओं व मुद्दों पर खुलकर कलम चलाई। तिलोथ और बयाला जंगल में चले संघर्ष को पत्र ने प्रमुखता से प्रकाशित किया।[47]

रवांई मेल (साप्ताहिक)

रवांई मेंल जनपद उत्तरकाशी के जनजाति क्षेत्र रंवाई से प्रकाशित होने वाला साप्ताहिक समाचार पत्र है। इसके सम्पादक व स्वामी राजेन्द्र सिंह असवाल हैं। पुरोला से प्रकाशित यह पत्र स्थानीय सभी पहलुओं पर गहराई से लिख रहा है। साथ ही वर्तमान में उत्तराखण्ड स्तर पर जनमुद्दों को उजागर करने में अग्रणी है।[48]

उत्तराखण्ड

'उत्तराखण्ड' पत्र का प्रकाशन जनपद टिहरी गढ़वाल के देवप्रयाग तहसील के समाजवादी विचारधारा के सामाजिक कार्यकर्ता और पत्रकार हीरालाल बडोला के द्वारा सन् 1954 में किया गया।

पत्र का प्रकाशन मुनिकीरेती, टिहरी से किया गया। 'उत्तराखण्ड' साप्ताहिक ने टिहरी-उत्तरकाशी जनपदों की जनसमस्याओं को उजागर किया तथा सामाजिक सरोकारों से जुड़े मुद्दों को प्राथमिकता देकर उन्हें सुलझाने का भी प्रयास किया।[49]

त्रिहरि (साप्ताहिक)

त्रिहरि एक साप्ताहिक पत्र था। इसके प्रकाशन का उद्देश्य टिहरी बाँध का विरोध और बाँध निर्माण से प्रभावित जनमानस की लड़ाई लड़ना था। पत्र का प्रकाशन सन् 1985 में टिहरी से किया गया।[50] पत्र के सम्पादक व प्रकाशक जाने-माने साहित्यकार डॉ० महावीर प्रसाद गैरोला के अनुज रघुवीर प्रसाद गैरोला थे। पत्र ने टिहरी बाँध निर्माण के विरोध में उठे स्वरों को तेज किया तथा बाँध निर्माण से प्रभावित लोगों को उचित पुनर्वास व विस्थापन की मांग को प्राथमिकता से प्रकाशित किया। कई बार पत्र ने बाँध निर्माण संस्था टिहरी हाइड्रो डेवलपमेंट कारपोरेशन (टीएचडीसी) की भ्रष्टाचार नीतियों को सरकार तथा जनता तक लाने में भी एक निर्भीक पत्रकारिता की भूमिका निभाई। लेकिन यह पत्र अधिक समय तक नहीं चल पाया।[51]

उत्तराखण्ड आजकल

'उत्तराखण्ड आजकल' का प्रकाशन सन् 2000 में टिहरी से शुरू हुआ। जैसा कि इसके नाम से परिलक्षित होता है, समकालीन क्षेत्रीय परिवेश को लेकर 'उत्तराखण्ड आजकल' मासिक पत्रिका का टिहरी नगर में जन्म हुआ। पत्रिका का स्वामित्व, प्रकाशन और मुद्रण जयप्रकाश पाण्डेय का था और सम्पादन पत्रकार महिपाल नेगी का। इस पत्रिका ने उत्तराखण्ड स्तर पर जनसमस्याओं को उजागर किया तथा टिहरी बाँध के विस्थापितों के दर्द को उकेरने से लेकर उन्हें सरकार तक तथा कार्यदाई संस्था टीएचडीसी तक पहुँचाने का कार्य किया। इसके अलावा पत्रिका ने प्रदेश स्तर पर पर्यटन, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक व सामाजिक मुद्दों पर जिम्मेदारी से खूब समाचार प्रकाशित किये। दुर्भाग्यवश सन् 2005 में इस पत्रिका का प्रकाशन बंद हो गया।[52]

नव प्रभात

'नव प्रभात' स्वतन्त्रता के पश्चात् पौड़ी से निकलने वाला एक महत्वपूर्ण अखबार था। पत्र का प्रकाशन 1948 में लैन्सडौन से शुरू हुआ। अखबार के जन्मदाता महेशानन्द थपलियाल थे लेकिन सरकारी कर्मचारी होने के नाते पत्र पर सम्पादक की जगह ललिता प्रसाद 'ललाम' का नाम तथा प्रकाशक की जगह नेत्र सिंह बिष्ट का नाम छपता था। पत्र अधिक समय तक नहीं चल पाया और 1950 में दो वर्ष बाद ही बंद हो गया।[53]

सीमान्त वार्ता

सीमान्त वार्ता साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन सन् 1988 में कोटद्वार से शुरू हुआ। पत्र के सम्पादक उत्तराखण्ड के वर्तमान मुख्यमंत्री डॉ० रमेश पोखरियाल 'निशंक' हैं। बाद में पत्र का प्रकाशन निशंक प्रकाशन, पौड़ी से होने लगा। बीच में पत्र की स्थिति कुछ हद तक लडख़डाने लगी लेकिन 2002 में पत्र ने फिर गति पकड़ी और वर्तमान में यह पत्र दैनिक समाचार पत्र के रूप में देहरादून से प्रकाशित हो रहा है। पत्र ने अपने प्रारम्भिक काल में गढ़वाल की ज्वलन्त समस्याओं को उजागर किया लेकिन वर्तमान में पत्रकारिता के बदलते परिदृश्य के अनुसार ही प्रकाशित हो रहा है।[54]

शैलवाणी (साप्ताहिक)

'शैलवाणी' एक साप्ताहिक पत्र है। पत्र का प्रकाशन पौड़ी जनपद के कोटद्वार शहर से सन् 2001 से किया जा रहा है। पत्र के सम्पादक भारतीय नौसेना से अवकाश प्राप्त सिताबपुर कोटद्वार निवासी प्रेम बलोधी हैं। पत्र में सामयिकता के साथ-साथ साहित्य रूचि भी विद्यमान है। पत्र ने गढ़वाल में व्याप्त सामाजिक जनसमस्याओं को उजागर कर उन्हें सरकार तक पहुँचाने का कार्य किया। गढ़वाल के प्रवासी जनमानस जो महाराष्ट्र के मुम्बई शहर में रहते हैं उन्हें गढ़वाल से बराबर जोड़े रखने का कार्य 'शैलवाणी' द्वारा किया जा रहा है। और यही कारण है कि पत्र के सबसे अधिक पाठक महाराष्ट्र में हैं।[55]

उत्तराखण्ड खबरसार (पाक्षिक)

गढ़वाल के पर्वतीय क्षेत्र से प्रकाशित होने वाला गढ़वाली बोली का यह पहला पत्र है। इस पाक्षिक पत्र का प्रकाशन सन् 2000 में पौड़ी जनपद मुख्यालय से किया गया। पत्र के सम्पादक विमल नेगी हैं। सम्पादक द्वारा 1977 में पौडी से रंत-रैबार (गढ़वाली बोली में) नामक पत्रिका का भी प्रकाशन किया गया था। पत्र गढ़वाली सामाजिक-सांस्कृतिक सरोकारों से जुड़ा पत्र है।[56]

गढ़वाल रिपोर्टर (साप्ताहिक)

गढ़वाल रिपोर्टर पौड़ी जनपद के श्रीनगर शहर से प्रकाशित होने वाला पहाड़ी क्षेत्र का पहला अंग्रेजी भाषा का समाचार पत्र था। पत्र का प्रकाशन सन् 1978 में शुरू हुआ। पत्र के स्वामी मोहनलाल जैन और सम्पादक हीरा वल्लभ थपलियाल थे। डेढ़ वर्ष बाद अखबार बन्द हो गया। अपने प्रकाशन कार्यकाल में पत्र ने कई ज्वलंत मुद्दों को सरकार के सामने रखा और राष्ट्रीय स्तर तक पहाड़ की सामाजिक समस्याओं को पहुँचाया।[57]

युगवाणी (साप्ताहिक/मासिक)

टिहरी जनक्रान्ति के महानायक श्रीदेव सुमन की शहादत के बाद प्रजामंडल आन्दोलन शिथिल सा हो गया था। राजशाही के खौफ से प्रजा मण्डल के शीर्ष कार्यकर्ता देहरादून आकर रहने लगे थे। स्वाधीनता प्राप्ति की पूर्व बेला पर टिहरी के कतिपय बुद्धिजीवियों और प्रजा मण्डल के कार्यकर्ताओं ने देहरादून में एक सम्मेलन कर प्रजामण्डल आन्दोलन को पुनः शुरू करने का निश्चय किया। आन्दोलन को दिशा निर्देश देने और उसके समाचारों को प्रकाशित करने के उद्देश्य से एक अखबार निकालने का निर्णय लिया गया। अखबार निकालने के लिए टिहरी रियासत अनुकूल जगह न थी, अतः देहरादून से अखबार निकालने का फैसला हुआ। टिहरी के मूल निवासी, काशी विद्यापीठ के तत्कालीन प्राचार्य श्री भगवती प्रसाद पांथरी के सम्पादन में 15 अगस्त 1947 को 'युगवाणी' का पहला अंक प्रकाशित हुआ। प्रजा मण्डल के सक्रिय कार्यकर्ता तेजराम भट्ट का प्रकाशन में सहयोग रहा। कुछ समय पाक्षिक प्रकाशन के बाद पत्र साप्ताहिक हो गया और सम्पादन का पूर्ण दायित्व आचार्य गोपेश्वर कोठियाल पर आ गया। तभी से आज तक यह पत्र निरन्तर प्रकाशित हो रहा है।[58]

टिहरी की जनक्रांति में 'युगवाणी' ने अहम भूमिका निभाई। इसलिए यह स्वाभाविक था कि, इसे राजा का कोपभाजन बनना पड़े। टिहरी रियासत में पत्र का प्रवेश वर्जित हो गया। किन्तु हर आन्दोलनकारी के पास 'युगवाणी' की प्रति हुआ करती थी। टिहरी की जनक्रांति में इस पत्र की वही भूमिका रही थी, जो रूस की क्रांति में लेनिन द्वारा सम्पादित पत्र 'इस्त्रा' की थी। यह पत्र पर्वतीय अंचल में निरन्तर चेतना का स्वर फूँकता रहा। रियासत में राजा के जोर-जुल्मों का पत्र ने खुलकर विरोध किया। सन् 1949 में टिहरी रियासत का उत्तर प्रदेश में विलीनीकरण हो गया तो अखबार के तेवरों में नरमी आ गई। अब वह रचनात्मक हो गया। सन् 1969-1972 की अवधि में साहित्यकार चारूचन्द चन्दोला ने पत्र का सह-सम्पादन किया। गोविन्द नेगी 'आग्नेय' और अन्य कई पत्रकारों ने अपने पत्रकारिता जीवन की शुरूआत 'युगवाणी' से की। पत्रकारिता और साहित्य के क्षेत्र में नई प्रतिभाओं को आगे बढ़ाने में 'युगवाणी' की सराहनीय भूमिका रही है। कोठियाल जी के अवसान के बाद उनके सुपुत्र संजय कोठियाल पत्र सम्पादन का दायित्व निभा रहे हैं। सन् 2001 से 'युगवाणी' निखार के साथ मासिक पत्रिका के रूप में निरन्तर प्रकाशित हो रही है। यह उत्तराखण्ड से प्रकाशित होने वाली अग्रणी पत्रिका है।

सीमांत प्रहरी (साप्ताहिक)

पिछले 40 वर्षों से नियमित प्रकाशित होने वाला मसूरी का यह पहला और अकेला हिन्दी साप्ताहिक है। 18 मई 1964 को इसका प्रवेशांक निकला था। यह देहरादून, मसूरी, टिहरी और गढ़वाल क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। पत्र के संस्थापक और सम्पादक सरदार हरबचन सिंह हैं। डूबते टिहरी नगर के विस्थापितों के पुनर्वास और टिहरी हाइड्रो डेवलपमेन्ट कार्पोरेशन में व्याप्त भ्रष्टाचार पर 'सीमान्त प्रहरी' ने खूब गहराई से लिखा। उत्तराखण्ड आन्दोलन पर अखबार ने खूब प्रभावी ढंग से अपने विचार प्रकट किए।[56]

उपरोक्त पत्र-पत्रिकाओं के अलावा गढ़वाल क्षेत्र का प्रमुख शहर व वर्तमान में राज्य की राजधानी देहरादून, समाचार पत्र-पत्रिकाओं का गढ़ बन गया है। वर्तमान में देहरादून से कई राष्ट्रीय स्तर के पत्र-पत्रिकाओं के साथ-साथ दर्जनों क्षेत्रीय पत्र-पत्रिकायें भी प्रकाशित हो रहे हैं। इन पत्र-पत्रिकाओं में- अमर उजाला, दैनिक जागरण, दैनिक हिन्दुस्तान, दैनिक ट्रिब्यून, राष्ट्रीय सहारा, सीमान्त वार्ता, पर्वत जन, उत्तरांचल, दून दर्पण, अटल हिमालय, हिमालय दर्पण, मनीष टाइम्स, उत्तराखण्ड पोस्ट, गढ़वाल पोस्ट आदि प्रमुख हैं। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि गढ़वाल क्षेत्र में समाज सुधार आन्दोलनों का दौर काफी लम्बा चला, वह स्वतन्त्रता से पूर्व का हो या स्वतन्त्रता के बाद के दौर से लेकर अब तक का दौर। समाज सुधार आन्दोलनों में पत्रकारिता की भूमिका के भी कई उदाहरण स्पष्ट हुये हैं। जिनसे ज्ञात होता है कि पत्रकारिता की भूमिका गढ़वाल क्षेत्र के समाज सुधार आन्दोलनों में महत्वपूर्ण रही है। विशेषकर स्वन्त्रता से पूर्व की गढ़वाल की पत्रकारिता का उद्देश्य ही समाज सुधार रहा है इस बात की पुष्टि इस अध्ययन में हुई है। स्वतन्त्रता के बाद जैसे ही सामाजिक-चेतना व राजनैतिक चेतना बढ़ी वैसे ही पत्रकारिता का परिदृश्य भी बदलता गया जिसके परिणामस्वरूप आज यहाँ की आधुनिक पत्रकारिता भी एक विश्वस्तरीय पत्रकारिता के रूप में खड़ी है।

संदर्भ-

1. एच० चार्ल्स हेमसेथः इण्डियन नेशनलिज्म एण्ड हिन्दू सोशल रिफार्म (1964)
2. योगेश धस्माना : उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलन का इतिहास, विनसर प्रकाशन, डिस्पेंसरी रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड
3. ललिता वैष्णव-चन्दोला : पं० विश्वम्बर दत्त चन्दोला शोध संस्थान, 19/12 पटेल रोड, देहरादून
4. वही
5. वही
6. योगेश धस्माना : उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलन का इतिहास, विनसर प्रकाशन, डिस्पेंसरी रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड
7. ललिता वैष्णव-चन्दोला : पं० विश्वम्बर दत्त चन्दोला शोध संस्थान, 19/12 पटेल रोड, देहरादून
8. वही
9. वही
10. योगेश धस्माना : उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलन का इतिहास, विनसर प्रकाशन, डिस्पेंसरी रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड
11. वही
12. ललिता वैष्णव - चन्दोला : पं० विश्वम्बर दत्त चन्दोला शोध संस्थान, 19/12 पटेल रोड, देहरादून
13. (गढ़वाली फाइलें 1906-1914)
14. (भेंटवार्ता - श्रीमती ललिता वैष्णव, 27 अप्रैल, 1987)
15. ललिता वैष्णव - चन्दोला : पं० विश्वम्बर दत्त चन्दोला शोध संस्थान, 19/12 पटेल रोड, देहरादून
16. योगेश धस्मानाः उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलन का इतिहास, विनसर प्रकाशन, डिस्पेंसरी रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड
17. (विशाल कीर्ति मासिक (पौडी), दिसम्बर, 1913)
18. योगेश धस्मानाः उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलन का इतिहास, विनसर प्रकाशन, डिस्पेंसरी रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड
19. वही
20. ललिता वैष्णव-चन्दोलाः पं० विश्वम्बर दत्त चन्दोला शोध संस्थान, 19/12 पटेल रोड, देहरादून
21. वही
22. वही
23. वही
24. वही
25. गढ़वाली मासिक मई-जून 1908
26. योगेश धस्मानाः उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलन का इतिहास, विनसर प्रकाशन, डिस्पेंसरी रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड, 2006
27. ललिता वैष्णव-चन्दोलाः पं० विश्वम्बर दत्त चन्दोला शोध संस्थान, 19/12 पटेल रोड, देहरादून
28. योगेश धस्मानाः उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलन का इतिहास, विनसर प्रकाशन, डिस्पेंसरी रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड, 2006
29. (गढ़वाली मासिक, मई 1911, लेख-महेशानन्द)
30. गढ़वाल समाचार मासिक, अक्टूबर, नवम्बर, व दिसम्बर 1913)
31. गढ़वाली मासिक नवम्बर, 1913)
32. शेखर पाठकः शोध प्रबन्ध 'उत्तराखण्ड में कुली बेगार प्रथा (1915-1949), कुमाऊं विश्वविद्यालय, नैनीताल
33. गढ़वाली मासिक, मई 1907 लेख-तारादत्त गैरोला
34. गढ़वाल समाचार, मासिक अगस्त-सितम्बर 1913
35. गढ़वाली फरवरी, 1908
36. योगेश धस्मानाः उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलन का इतिहास, विनसर प्रकाशन, डिस्पेंसरी रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड, 2006
37. ललिता वैष्णव-चन्दोलाः पं० विश्वम्बर दत्त चन्दोला शोध संस्थान, 19/12 पटेल रोड, देहरादून
38. शक्ति प्रसाद सकलानीः उत्तराखण्ड में पत्रकारिता का इतिहास, उत्तरा प्रकाशन, टी-कैम्प, रूद्रपुर, उधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड, 2004
39. वही
40. योगेश धस्मानाः उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलन का इतिहास, विनसर प्रकाशन, डिस्पेंसरी रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड, 2006
41. शक्ति प्रसाद सकलानीः उत्तराखण्ड में पत्रकारिता का इतिहास, उत्तरा प्रकाशन, टी-कैम्प, रूद्रपुर, उधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड, 2004
42 से 46 तक वही
47. ललिता वैष्णव-चन्दोलाः पं० विश्वम्बर दत्त चन्दोला शोध संस्थान, 19/12 पटेल रोड, देहरादून
48. वही
49. गोविन्द राजू पंतः समसामयिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक-सांस्कृतिक परिपेक्ष्य, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की पीजीडीजेएमसी कार्यक्रम की पाठ्यसामग्री, 2010
50. वही
51. शक्ति प्रसाद सकलानीः उत्तराखण्ड में पत्रकारिता का इतिहास, उत्तरा प्रकाशन, टी-कैम्प, रूद्रपुर, उधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड, 2004
52 से 54 तक वही
55. गोविन्द राजू पंतः समसामयिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक-सांस्कृतिक परिपेक्ष्य, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की पीजीडीजेएमसी कार्यक्रम की पाठयसामग्री, 2010
56 से 59 तक - शक्ति प्रसाद सकलानीः उत्तराखण्ड में पत्रकारिता का इतिहास, उत्तरा प्रकाशन, टी-कैम्प, रूद्रपुर, उधमसिंह नगर उत्तराखण्ड, 2004